उपनिवेश मुक्ति अथवा विउपनिवेशीकरण

■ **भूमिका:**

- "जो प्रभाव नेपोलियन के युद्धों का लैटिन अमेरिका स्थित स्पेन के उपनिवेशों पर पड़ा था, वही प्रभाव द्वितीय विश्व युद्ध का एशियाई-अफ्रीकी उपनिवेशों पर पड़ा।" संभवत: विउपनिवेशीकरण की घटना द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् की महत्वपूर्ण घटना थी, क्योंकि इस घटना ने विश्व की परिधि का विस्तार कर दिया था। विश्व समुदाय काफी व्यापक हो चुका था, परंतु इसके साथ कुछ नए प्रश्न खड़े हुए थे। ये प्रश्न थे- मातृदेश और पुराने उपनिवेशों के बीच, जो अब स्वतंत्र हो चले थे, संबंधों का आधार क्या होगा? क्या सचमुच उपनिवेशवाद समाप्त हो चुका था? दूसरा महत्वपूर्ण प्रश्न यह था कि ये एशियाई-अफ्रीकी राष्ट्र आर्थिक रूप से काफी पिछड़े हुए थे, इसलिए इनका विकास किस प्रकार होगा और फिर ये विकास के किस मॉडल को अपनाएंगे, क्योंकि उस समय अर्थव्यवस्था के दो प्रमुख मॉडल विकसित हो चुके थे- पूँजीवादी मॉडल और समाजवादी मॉडल।
- परंतु इन मुद्दों से पूर्व सबसे प्रमुख मुद्दा यह रहा था कि इन राष्ट्रों को स्वतंत्रता किस प्रकार हासिल होगी? यह प्रश्न इसलिए महत्वपूर्ण था क्योंकि अलग-अलग उपनिवेश विकास के अलग-अलग स्तर पर थे तथा इन उपनिवेशों में मातृदेश के हित भी भिन्न-भिन्न थे। इसके अतिरिक्त उपनिवेशों के प्रति विभिन्न औपनिवेशिक शक्तियों के बीच नीति एवं दृष्टिकोण में भी अंतर था। उदाहरण के लिए, ब्रिटेन का रुख अपेक्षाकृत नरम रहा था, तो फ्रांस का रुख अत्यधिक कठोर। एक तरफ जहाँ ट्यूनीशिया और मोरक्को जैसे फ्रांस के उपनिवेश अपेक्षाकृत आसानी से मुक्त हो गए, वहीं अफ्रीका में अल्जीरिया एवं एशिया में वियतनाम के साथ ऐसा नहीं हुआ, यहाँ खूनी संघर्ष शुरू हो गया।
- **'विउपनिवेशीकरण' शब्द का औचित्य**- द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया उतनी ही तेजी से आरंभ हुई, जितनी तेजी से 75 वर्ष पूर्व औपनिवेशीकरण की प्रक्रिया शुरू हुई थी। फिर भी, विउपनिवेशीकरण का अर्थ यह नहीं लगाया जाना चाहिए कि औपनिवेशिक शक्तियों ने स्वेच्छा से उपनिवेशों को मुक्त कर दिया, बल्कि उन्होंने उपनिवेश मुक्ति के निर्णय को तब स्वीकार किया जब उनके ऊपर परिस्थितियों का दबाव पड़ा। इसलिए अलग-अलग उपनिवेश के संदर्भ में औपनिवेशिक शक्तियों की नीति अलग-अलग रही।
- ऐसे उपनिवेश जहाँ एक बड़ी श्वेत जनसंख्या बस गई थी तथा जहाँ अर्थव्यवस्था पर मातृदेश का बेहतर नियंत्रण था, औपनिवेशिक शक्तियों ने वहाँ यथासंभव नियंत्रण बनाए रखने का प्रयास किया। इसलिए उन देशों में उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया बड़ी कठिन और चुनौतीपूर्ण हो गई उदाहरण के लिए, अल्जीरिया, तंगायनिका, केन्या, रोडेशिया आदि।

■ **उपनिवेश मुक्ति को प्रोत्साहन देने वाले कारक:**

तीन भिन्न स्तरों पर

औपनिवेशिक शक्ति के स्तर पर	अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाला विकास	उपनिवेश के स्तर पर होने वाला विकास
✍ द्वितीय विश्वयुद्ध में ब्रिटेन, फ्रांस और हॉलैन्ड जैसी साम्राज्यवादी शक्तियों का पतन।	✍ अटलांटिक चार्टर की भूमिका (1941)	✍ उपनिवेशों में राष्ट्रवाद की प्रगति एवं स्वतंत्रता की आकांक्षा को प्रोत्साहन
✍ साम्राज्यवादी शक्तियाँ युद्ध के पश्चात् स्वयं अपने आर्थिक पुनर्निर्माण में उलझ गईं और उपनिवेशों से उनका ध्यान हट गया।	✍ संयुक्त राष्ट्र संघ का दबाव	✍ अटलांटिक चार्टर एवं द्वितीय विश्व युद्ध के घोषित उद्देश्य से भी प्रेरणा।
✍ अब साम्राज्यवादी शक्तियों की मुख्य रुचि यूरोपीय बाजार में हो गयी तथा वे उपनिवेशों से विमुख होने लगीं।	✍ सोवियत रूस एवं संयुक्त राज्य अमेरिका का दबाव	✍ उपनिवेशों में स्वतंत्रता के लिए उग्र आंदोलन आरम्भ, यथा, भारत में भारत छोड़ो आंदोलन तथा केन्या में माऊ-माऊ आंदोलन।

- उपनिवेश मुक्ति को प्रोत्साहन देने वाले कारकों को तीन विभिन्न स्तरों में बाँटकर देखा जा सकता है-
  1. औपनिवेशिक शक्ति के स्तर पर होने वाले परिवर्तन
  2. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाला विकास
  3. उपनिवेश के स्तर पर होने वाला विकास

- **औपनिवेशिक शक्ति के स्तर पर होने वाले परिवर्तन:**

1. द्वितीय विश्वयुद्ध ने औपनिवेशिक शक्तियों को सैनिक एवं आर्थिक दृष्टि से कमजोर कर दिया था। उदाहरण के लिए, फ्रांस तथा हॉलैंड को जर्मनी के द्वारा जीत लिया गया था। उसी प्रकार, ब्रिटेन की आर्थिक दशा खराब हो गई। अत: ऐसा कहा जा सकता है कि ब्रिटेन ने द्वितीय विश्वयुद्ध को तो जीत लिया, किन्तु अपने साम्राज्य को हार गया।
2. द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् स्वयं साम्राज्यवादी शक्तियाँ ही आर्थिक पुनर्निर्माण का दबाव झेल रही थीं। अत: यूरोप की साम्राज्यवादी शक्तियाँ अपने खर्चीले उपनिवेशों को बनाए रखने के बजाय स्वयं की समस्याओं पर केन्द्रित होने लगीं।
3. अब यूरोपीय शक्तियों का ध्यान यूरोपीय आर्थिक समुदाय के माध्यम से स्वयं अपने विकास पर चला गया था। बताया जाता है कि अब यूरोपीय शक्तियों के बीच यह धारणा घर करने लगी थी कि उपनिवेशों में निवेश के कारण स्वयं मातृदेश की अर्थव्यवस्था पिछड़ गई। दृष्टांत के तौर पर जर्मनी को देखा जा रहा था, जिसने प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् अपने उपनिवेश गवाँ दिए थे, फिर उसकी अर्थव्यवस्था की काफी तरक्की हुई।

- **अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाला विकास:**

1. 1941 ई. में अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट द्वारा ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल के साथ मिलकर **अटलांटिक चार्टर** लाया गया। इसमें यह प्रावधान था कि विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों अर्थात् औपनिवेशिक विश्व के लोगों को आत्मनिर्णय का अधिकार मिलेगा।
2. औपनिवेशिक शक्ति को नवीन अन्तर्राष्ट्रीय विचार से भी धक्का पहुँचा। उदाहरण के लिए, **संयुक्त राष्ट्र संघ** ने साम्राज्यिक शक्ति पर निरन्तर दबाव बनाए रखा तथा मानव स्वतंत्रता एवं मानव अधिकार जैसी अवधारणा पर विशेष बल दिया। फिर जैसे-जैसे एशिया तथा अफ्रीका के नव-स्वतंत्र देश इस संस्था में शामिल होते गए तथा इसकी संख्या में वृद्धि होती गई, वैसे ही वैसे इसकी राजनीतिक तथा वैचारिक भूमिका अधिक प्रबल होती गई।
3. **सोवियत रूस** 1920 से ही उपनिवेशवाद की आलोचना कर रहा था तथा उसे पूँजीवाद की संतान करार दिया। उसने उपनिवेशवाद को राजनीतिक तथा आर्थिक शोषण का ही एक रूप माना। फिर इसने वर्ग-संघर्ष तथा समाजवादी क्रांति के रूप में एक वैकल्पिक मॉडल प्रस्तुत किया। लेनिन ने उपनिवेश के लोगों को नये सर्वहारा का नाम दिया।
4. **संयुक्त राज्य अमेरिका** के द्वारा भी उपनिवेश मुक्ति के लिए दबाव बनाया गया। आधिकारिक रूप में अमेरिकी राष्ट्रपति विल्सन ने अपने यूरोपीय मित्रों को इस बात पर राजी करने का प्रयत्न किया कि आत्मनिर्णय के सिद्धान्त को यूरोप के साथ-साथ एशिया एवं अफ्रीका में भी लागू किया जाना चाहिए। इसके पीछे उसका वास्तविक उद्देश्य शीत युद्ध में अपने सहयोगी राष्ट्रों की संख्या को बढ़ाना तथा सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में अपने बाजार का विस्तार करना था।

- **उपनिवेश के स्तर पर होने वाला विकास:**

1. कहा जाता है कि नेपोलियन के युद्धों का जो प्रभाव स्पेन के लैटिन अमेरिका स्थित उपनिवेशों पर पड़ा था, वही प्रभाव द्वितीय विश्वयुद्ध का एशिया एवं अफ्रीकी उपनिवेशों के ऊपर पड़ा। द्वितीय विश्वयुद्ध मानव स्वतंत्रता एवं प्रजातंत्र की रक्षा के नाम पर लड़ा गया था। इस युद्ध के समय तेजी से राष्ट्रीय चेतना का प्रसार निचले स्तर पर होने लगा।
2. कुछ ब्रिटिश इतिहासकार यह सिद्ध करने का प्रयास करते हैं कि ब्रिटेन अपने उपनिवेशों के वयस्क होने की प्रतीक्षा कर रहा था और जिस समय उसके उपनिवेश वयस्क हो गए, उसने स्वेच्छा से आजादी दे दी। परंतु यह साम्राज्यवादी व्याख्या है, वास्तविकता इससे पृथक् है। उपनिवेश छोड़ना पश्चिमी शक्तियों का विकल्प नहीं, बल्कि विवशता थी। भारत में 1942 में ही भारत छोड़ो आंदोलन शुरू हो गया था, चीन में कम्युनिस्ट आंदोलन उग्र था, अल्जीरिया और वियतनाम में खूनी संघर्ष छिड़ गया था, केन्या में माऊ-माऊ आंदोलन आरंभ हो गया था।

- इसलिए कुल मिलाकर हम ऐसा कह सकते हैं कि यद्यपि उपनिवेश मुक्ति के लिए कई प्रकार के कारक उत्तरदायी रहे थे, किंतु इनमें निर्णायक भूमिका स्वयं औपनिवेशिक प्रतिरोध अथवा उपनिवेश के स्तर पर होने वाली राष्ट्रीय जागृति ने निभाई।

■ **उपनिवेश मुक्ति आंदोलन के दो विभिन्न मॉडल:**

1. **पश्चिम का उदारवादी-पूँजीवादी मॉडल**- अधिकांश उपनिवेशों ने स्वयं पश्चिम की साम्राज्यवादी शक्तियों के संपर्क में उनके राजनीतिक-आर्थिक मॉडल की ओर आकर्षण दिखाया। अधिकांश देशों में पश्चिमी शिक्षा प्राप्त बुद्धिजीवियों ने राष्ट्रीय आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। इसलिए स्वतंत्रता के बाद भी पश्चिमी मॉडल पर ही प्रजातांत्रिक सरकारें गठित करने का प्रयास किया गया था। यद्यपि कुछ ही देशों में प्रजातांत्रिक सरकारें चलीं, जबकि अधिकांश देशों में सैनिक तानाशाह स्थापित हो गए अथवा एक दलीय शासन व्यवस्था कायम हो गई। हालांकि

स्वतंत्रता आंदोलन के मध्य इन देशों में समाजवादी अथवा मार्क्सवादी दल भी सक्रिय रहे थे, परंतु ये राष्ट्रीय आंदोलन पर अपना वर्चस्व स्थापित करने में विफल रहे।

2. **समाजवादी अथवा मार्क्सवादी मॉडल**- इस मॉडल को आधार बनाकर चीन एवं वियतनाम जैसे राष्ट्रों ने स्वतंत्रता हासिल की, परंतु इन स्वतंत्रता आंदोलनों को पश्चिम के पूँजीवादी देशों के विरोध का सामना करना पड़ा और अंततोगत्वा ये आंदोलन शीत युद्ध का हिस्सा बन गये।

■ **उपनिवेश मुक्ति की घटनाएँ:**

उपनिवेश मुक्ति की घटनाएँ
एशिया महाद्वीप

पश्चिम एशिया	दक्षिण एशिया	दक्षिण-पूर्व एशिया	पूर्वी एशिया

■ **पश्चिम एशिया**-

- जैसा कि हम जानते हैं कि प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् पेरिस शान्ति सम्मेलन में राष्ट्रसंघ के निरीक्षण में पश्चिम एशिया और अरब क्षेत्र के राज्यों को मैण्डेट प्रणाली के तहत ब्रिटेन और फ्रांस के संरक्षण में रखा गया था। कुछ क्षेत्रों पर तो इन्होंने अर्द्ध-संरक्षण और कुछ क्षेत्रों पर प्रत्यक्ष संरक्षण स्थापित कर लिया था, परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध से पहले ही ये राज्य औपचारिक रूप में स्वतंत्र हो चुके थे। 1932 में इराक, ब्रिटिश नियंत्रण से मुक्त हो गया था। 1932 में ही हेजाज का क्षेत्र, सऊदी अरब के रूप में स्थापित हो गया था। 1941 तक फ्रांस को भी लेबनान और सीरिया से निकलना पड़ा था और 1947 के अन्त तक ब्रिटिश, फिलिस्तीनी क्षेत्र छोड़कर चले गए, परन्तु उन्होंने फिलिस्तीनी और यहूदी संघर्ष का बीज बो दिया था।
- परन्तु साम्राज्यवादी शक्तियों की गिद्ध दृष्टि उन क्षेत्रों पर पड़ी रही, विशेषकर तब जब उनके पास पेट्रोलियम का भंडार मिल गया। फिर पश्चिमी कम्पनियाँ इन क्षेत्रों में मँडराने लगीं और उनके पेट्रोलियम का दोहन करने लगीं। इसे तेल साम्राज्यवाद का नाम दिया जाता है। आगे चलकर इसने नए प्रकार के संघर्ष को जन्म दिया।

■ **दक्षिण एशिया**-

- द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् भारत स्वतंत्रता प्राप्त करने वाला पहला देश था। 1947 ई. में भारत को आजादी मिली। पाकिस्तान, भारत से ही निकलकर आया। 1948 ई. में श्रीलंका एवं बर्मा स्वतंत्र हो गया। दक्षिण एशिया की स्वतंत्रता का मॉडल भारत ने तैयार किया। यहाँ पर संवैधानिक पद्धति द्वारा शान्तिपूर्ण तरीके से सत्ता का हस्तान्तरण हुआ। बर्मा में कुछ तनाव जापानी आक्रमण को लेकर रहा था और आगे वहाँ सैनिक तानाशाही स्थापित हो गयी।

■ **दक्षिण-पूर्व एशिया**-

- दक्षिण-पूर्व एशिया में उपनिवेश मुक्ति का अनुभव जटिल और कष्टकर सिद्ध हुआ। इन क्षेत्रों में उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया निम्नलिखित पहलुओं से जुड़ गयी-

i. द्वितीय विश्वयुद्ध के मध्य जापानी आक्रमण के कारण यू.एस.ए., फ्राँस, हॉलैंड और ब्रिटेन जैसी साम्राज्यवादी शक्तियों को अपने उपनिवेश से निकलना पड़ा था और जापानियों ने इन पर कब्जा जमा लिया था। अब जब वे दोबारा लौटकर इस पर कब्जा करने का प्रयत्न करने लगे तो उन्हें सफलता नहीं मिली, क्योंकि राष्ट्रवादी प्रतिरोध काफी तीव्र हो गया था।

ii. मलय प्रायद्वीप में ब्रिटिश के हित, इण्डोनेशिया में डचों के हित और वियतनाम में फ्रांसीसियों के हित गहरे रूप में निहित थे। अत: वे इन क्षेत्रों को आसानी से छोड़कर जाने के लिए तैयार नहीं थे।

iii. चीन के प्रभाव से दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में कम्युनिस्ट पार्टी स्थापित थी और काफी सक्रिय भी थी। इसलिए भी साम्राज्यवादी शक्तियाँ इन क्षेत्रों में सक्रिय रहना चाहती थीं, ताकि साम्यवादी पार्टी को सफलता न मिले।

फिलिपीन्स:

- 1946 में फिलिपीन्स को संयुक्त राज्य अमेरिका ने आजादी दे दी। परन्तु साम्यवादी पार्टी की बढ़ती प्रगति से वह चिन्तित हो गया और उसे हराने का प्रयत्न करता रहा। अंत में, 1950 के दशक के अंत तक साम्यवादी पार्टी पराजित हुई, तो फिर संयुक्त राज्य अमेरिका ने चैन की साँस ली।

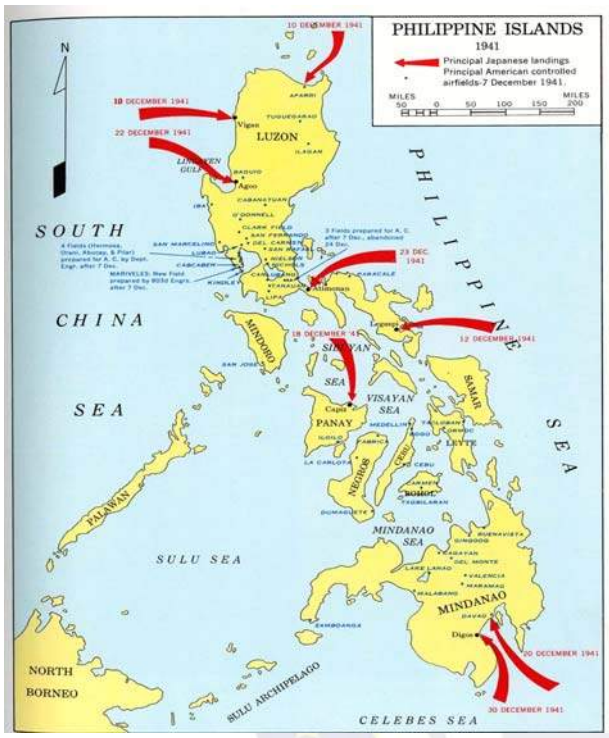

मलय प्रायद्वीप:

- यह एक ब्रिटिश उपनिवेश था। ब्रिटिश, जापान की पराजय के बाद फिर दोबारा लौटकर आया और इस पर कब्जा करने का प्रयत्न करने लगा, विशेषकर इसलिए कि उसकी अर्थव्यवस्था खराब हो गयी थी और यहाँ से ब्रिटिश को रबर एवं टिन जैसे उत्पादों की प्राप्ति होती थी। परन्तु तभी इस क्षेत्र में मलय, भारतीय एवं चीनी मुल्क के लोग संगठित होकर स्वतंत्रता के लिए आन्दोलन करने लगे। ब्रिटिश पर दबाव बना, परन्तु तभी इस क्षेत्र में कम्युनिस्ट पार्टी प्रगति करने लगी थी। इसलिए भी ब्रिटिश इस क्षेत्र को खाली करने के लिए तैयार नहीं थे, परन्तु अंत में जब राष्ट्रवादी तत्वों के सहयोग से ब्रिटिश ने कम्युनिस्टों को दबा दिया, तो फिर 1957 ई. में मलय प्रायद्वीप को आजादी दी।

प्रश्न : मलय प्रायद्वीप में उपनिवेश उन्मूलन प्रक्रम में सन्निहित क्या-क्या समस्याएं थीं? (UPSC-2017)

उत्तर: 1940 के दशक में दक्षिण-पूर्व एशिया में पश्चिमी शक्तियों के लगभग सभी उपनिवेशों को दो चुनौतियों का सामना करना पड़ा। पहली चुनौती थी जापानी विजय और दूसरी चुनौती थी साम्यवाद का बढ़ता प्रभाव। मलाया में ब्रिटिश को भी उन्हीं चुनौतियों का सामना करना पड़ा।

यह क्षेत्र 1942 में जापानी कब्जे में आ गया था, लेकिन 1945 में जब जापान ने हिरोशिमा और नागासाकी की त्रासदी के बाद आत्मसमर्पण कर दिया, तब ब्रिटेन द्वारा फिर इसे वापस ले लिया गया। उसके पश्चात् मलय प्रायद्वीप के राष्ट्रवादियों ने, जिनमें मलय, चीनी और भारतीय, तीन अलग-अलग जातीय समूह शामिल थे, ब्रिटिश शासन से मुक्ति की माँग करना शुरू कर दिया। लेकिन उसके बाद भी अंग्रेजों ने दो कारणों से वहाँ रहने का फैसला किया।

प्रथम, युद्ध के बाद ब्रिटेन को आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। इसलिए ब्रिटेन के घटते राजकोष और अपंग अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करने के लिए उपनिवेश से संसाधनों का दोहन आवश्यक था। विशेष रूप से, रबर और टिन के निर्यात के लिए मलाया पर ब्रिटिश नियंत्रण बनाए रखना आवश्यक हो गया था।

दूसरे, 1942 और 1945 के बीच जापानियों के खिलाफ लड़ाई के दौरान चीनी कम्युनिस्टों ने अपनी शक्ति का विस्तार कर लिया था। फिर, 1945 के बाद वे मलाया में एक शक्तिशाली राजनीतिक ताकत के रूप में उभरे। यह अंग्रेजों के लिए अत्यंत चिंता का विषय था क्योंकि साम्यवाद पर नियंत्रण रखना पश्चिमी शक्तियों की जर्मन नीति का एक हिस्सा था। इसलिए अंग्रेजों ने मलेशिया के गैर-कम्युनिस्ट तत्वों के साथ एक संयुक्त मोर्चा बनाते हुए दृढ़ संकल्प के साथ छापामारों के खिलाफ लड़ाई लड़ी। परिणामस्वरूप, कम्युनिस्ट गुरिल्ला हार गए। फिर, 1957 में ब्रिटिश, मलाया से शांतिपूर्ण तरीके से निकल गया। इस तरह, निश्चित रूप से मलाया में ब्रिटिश अनुभव, इंडो-चीन में फ्रांसीसी अनुभव से अलग था।

इण्डोनेशिया:

- 17वीं सदी से ही इण्डोनेशिया डच उपनिवेश रहा था और वहाँ डचों के बृहद्तर हित रहे थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के मध्य जापानी आक्रमण के कारण डचों को इस क्षेत्र से निकलना पड़ा था, परन्तु जापान की पराजय के पश्चात् डचों ने इस क्षेत्र पर दोबारा कब्जा करना चाहा। तभी डॉ. सुकर्णो के नेतृत्व में राष्ट्रवादी पार्टी ने कड़ा प्रतिरोध आरम्भ किया। चूंकि डॉ. सुकर्णो का कम्युनिस्टों से विरोध था, इसलिए संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्रिटेन का दृष्टिकोण भी सुकर्णो के प्रति नरम बना रहा। इण्डोनेशिया की

स्वतंत्रता के मुद्दे पर 1949 ई. में नयी दिल्ली में भी एशियाई देशों की एक बैठक हुई थी। अन्त में, संयुक्त राष्ट्र संघ के हस्तक्षेप से 1949 में इण्डोनेशिया को स्वतंत्रता मिल गयी।

वियतनाम:

- वियतनाम में उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया ने एक बड़ा ही उग्र रूप धारण कर लिया और इसका कारण था वियतनाम में हो-ची-मिन्ह के अधीन साम्यवादी पार्टी की प्रगति। 1945 ई. में जापानियों के द्वारा खाली करने के बाद हो-ची-मिन्ह ने उत्तरी वियतनाम में एक कम्युनिस्ट सरकार स्थापित कर दी, परन्तु फ्रांसीसी अभी भी वियतनाम को खाली करने के लिए तैयार नहीं थे। जापानी आक्रमण के कारण वियतनाम से फ्रांस के पैर उखड़ गए थे, लेकिन जापान के समर्पण करते ही फ्रांस ने भी वियतनाम पर कब्जा करने की होड़ लगा दी और फ्रांसीसी सहायता से दक्षिणी वियतनाम में एक पूँजीवादी सरकार स्थापित हो गयी। इस प्रकार, वियतनाम व्यावहारिक रूप में दो भागों में बँट गया। इसने न केवल गृहयुद्ध का रूप लिया, बल्कि यह शीत युद्ध का भी हिस्सा बन गया। ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका, फ्रांस की ओर से तथा सोवियत रूस और आगे चीनी गणतंत्र भी हो-ची-मिन्ह की सहायता में खड़े हो गए। वास्तव में, वियतनाम में हो-ची-मिन्ह और कम्युनिस्ट पार्टी को जन समर्थन प्राप्त था, परन्तु फिर भी अमेरिकी प्रभाव में संयुक्त राष्ट्र संघ, ने वियतनाम को दो भागों में बाँट दिया- उत्तरी एवं दक्षिणी वियतनाम। परन्तु इस घटना ने आगे 30 वर्षों के संघर्ष को जन्म दिया और अन्ततः संयुक्त राज्य अमेरिका को भागना पड़ा। फिर 1975 ई. में वियतनाम के दोनो हिस्सों का एकीकरण हो गया।

■ पूर्वी एशिया:

जापान:

- जापान के समर्पण करने के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका ने उसे अपने संरक्षण में ले लिया था और फिर अमेरिकी संरक्षण में ही जापान के आर्थिक पुनर्निर्माण का कार्य चलता रहा।

कोरिया:

- जापान के निकलने के पश्चात् कोरिया भी शीतयुद्ध का हिस्सा बन गया क्योंकि उत्तर से सोवियत रूस ने घुसकर कोरिया के उत्तरी भाग पर कब्जा कर लिया, जबकि दक्षिणी भाग पर संयुक्त राज्य अमेरिका का नियंत्रण बना रहा। इस प्रकार, 1947-1948 तक कोरिया भी उत्तरी एवं दक्षिणी कोरिया के रूप में विभाजित हो चुका था और शीघ्र ही यह शीत युद्ध का भी मैदान बन गया। उत्तरी कोरिया में एक साम्यवादी सरकार स्थापित हो गयी।

चीन:

- चीन एक अनोखे प्रकार के साम्राज्यवाद का शिकार रहा था। कई साम्राज्यवादी शक्तियों ने मिलकर चीन का शोषण किया था। चीन ने भी समय-समय पर इस शोषण के विरुद्ध प्रतिक्रिया दिखायी थी। कभी ताइपिंग विद्रोह (1857) के रूप में तो कभी बॉक्सर विद्रोह (1899-1900) के रूप में, परन्तु यह कारगर नहीं रहा था। आगे डॉ. सनयात सेन के द्वारा 1911 ई. में कोमिंगतांग पार्टी के नेतृत्व में चीन में एक राष्ट्रवादी आन्दोलन आरम्भ किया गया। अंत में, 1912 ई. में चीन में मंचू वंश के शासन को समाप्त कर गणतंत्र की घोषणा की गयी, परन्तु यह गणतंत्र चीन की समस्या का समाधान नहीं कर सका।
- अब सोवियत रूस के प्रभाव में चीन में कम्युनिस्ट पार्टी की प्रगति होने लगी तथा 1921 ई. में शंघाई में औपचारिक रूप में इसकी शुरुआत हुई। इसका नेता माओत्से तुंग था, जो बहुत ही कर्मठ एवं आक्रामक था तथा जिसके पास क्रांति की एक व्यावहारिक रणनीति थी। आरम्भ में, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने कोमिंगतांग पार्टी के साथ सहयोग की नीति अपनायी थी। उसने डॉ. सनयात सेन और उसके उत्तराधिकारी चिआंग-काई-शेक के अन्तर्गत कोमिंगतांग पार्टी के साथ मिली जुली सरकार भी बनायी थी, परन्तु 1927 ई. के पश्चात् चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी पृथक् रणनीति अपनायी। इस रणनीति का बहुत हद तक श्रेय माओत्से तुंग को जाता है।

रणनीति-

- चीन में सर्वहारा क्रान्ति का आधार किसान होगा और चीन में क्रान्ति गाँव से नगर की ओर जायेगी, नगर से गाँव की ओर नहीं। इस प्रकार चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने मुख्यतः किसानों को संगठित किया।
- माओत्से तुंग ने व्यावहारिक रणनीति अपनाते हुए आरम्भ में जिस भूमि पर कब्जा किया, उसे राज्य के अधीन नहीं लिया, बल्कि किसानो के बीच बाँटा।
- 1931 ई. के बाद जब जापान का आक्रमण आरम्भ हुआ, तो जिन क्षेत्रों से चिआंग-काई-शेक की सरकार पीछे हटती रही, उन क्षेत्रों में कम्युनिस्ट ने जाकर लोगों के बीच अपना जनाधार विकसित किया।
- अन्त में, जब जापानियों ने समर्पण किया तो चीन का एक बड़ा भू-भाग खाली हो गया। उस भू-भाग पर कब्जा करने के लिए चिआंग-काई-शेक के अन्तर्गत कोमिंगतांग पार्टी तथा माओत्से तुंग के अन्तर्गत कम्युनिस्ट पार्टी के बीच 4 वर्षों का एक लम्बा गृहयुद्ध चला। हालांकि सैन्य क्षमता

कोमिंगतांग दल के पास अधिक थी, परन्तु जन समर्थन कम्युनिस्ट पार्टी के साथ था। अतः कोमिंगतांग दल पीछे हटता गया और अंत में ताइवान में जाकर उसने शरण ली, जबकि चीन में कम्युनिस्ट पार्टी की जीत हुई और उसने माओत्से तुंग के नेतृत्व में नवम्बर, 1949 में चीनी गणतंत्र की स्थापना की।

■ **अफ्रीका में उपनिवेश मुक्ति आंदोलनः**

• **भारत की स्वतंत्रता का प्रभाव–**

1. ट्यूनीशिया, मोरक्को एवं क्वामे नक्रुमाह के अंतर्गत घाना स्वतंत्रता की दिशा में सोच रहा था। इनमें घाना, जो पहले 'गोल्ड कोस्ट' के नाम से जाना जाता था, एक ब्रिटिश उपनिवेश था। नक्रुमाह एक पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त बुद्धिजीवी था, जो स्वतंत्रता की दिशा में निरंतर सोच रहा था और ब्रिटेन के द्वारा इस माँग को बार–बार ठुकराया जा रहा था। किंतु जब 1947 ई. में भारत को आजादी मिली, तो इस माँग को ठुकराना अधिक दिनों तक संभव नहीं रहा। उस समय मोरक्को और ट्यूनीशिया भी फ्रांस से स्वतंत्र हो चुके थे तथा अल्जीरिया में खूनी संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई थी।
2. घाना के क्वामे नक्रुमाह तथा जाम्बिया के केनेथ कोंडा ने अपनी–अपनी जीवनी में स्पष्ट रूप से लिखा है कि वे किस प्रकार भारत के राष्ट्रीय आंदोलन से प्रभावित हो रहे थे।
3. गाँधी के सत्याग्रह आंदोलन ने अफ्रीकी नेताओं को भी प्रतिरोध करने का एक वैकल्पिक मार्ग दिया। दक्षिण अफ्रीका की लोकप्रिय पार्टी अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस (ANC) के नेता अल्बर्ट लथूली गाँधीवादी आंदोलन से बहुत प्रभावित हुए और उस तरीके को अपनाया। नेल्सन मंडेला पर भी गाँधी का प्रभाव था। इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद नीति के विरुद्ध चलने वाले आंदोलन में भी भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की अप्रत्यक्ष भूमिका रही थी।

अभ्यास प्रश्न– *अफ्रीका के राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन पर भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के प्रभाव को दर्शाइए।*

• **उत्तरी–पश्चिमी अफ्रीका में उपनिवेश मुक्ति का मॉडल**– उत्तरी–पश्चिमी अफ्रीका में उपनिवेश मुक्ति का मॉडल घाना ने तैयार किया। इस क्षेत्र में उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–

i. अगर अल्जीरिया को अपवाद में रखा जाए, तो उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण रही। शान्तिपूर्ण ढंग से सत्ता के हस्तान्तरण का एक बड़ा कारण यह भी रहा था कि इस क्षेत्र में साम्राज्यवादी शक्तियों का कोई विशेष हित नहीं था।

ii. इस क्षेत्र में संवैधानिक तरीकों से सत्ता का हस्तान्तरण हुआ।

iii. प्रायः नेतृत्व मध्यवर्ग के बुद्धिजीवियों के हाथों में रहा था, उदाहरण के लिए, घाना में क्वामे नक्रुमाह। उसी प्रकार, नाइजर, सिआरा लिओन, आईवरी कोस्ट, सेनेगल आदि देशों में भी नेतृत्व मध्यवर्ग के हाथों में ही रहा था तथा संवैधानिक तरीके से सत्ता का हस्तान्तरण हुआ।

अल्जीरिया में खूनी संघर्ष–

• अल्जीरिया फ्रांस का उपनिवेश रहा था। फ्रांस के लिए अल्जीरिया का लगभग वही महत्व था, जो ब्रिटिश के लिए भारत का रहा था।

• अल्जीरिया को 'मिनी फ्रांस' भी कहा जाता था। यहाँ लगभग 10 लाख फ्रांसीसी निवास करते थे तथा यहाँ के अधिकांश संसाधन फ्रांसीसी कुलीनों के नियंत्रण में थे। यही वजह है कि अल्जीरिया की स्वतंत्रता का विरोध सबसे पहले अल्जीरिया में निवास करने वाले फ्रांसीसी कुलीन कर रहे थे। अंत में, अल्जीरिया के स्वतंत्रता के मुद्दे ने खूनी संघर्ष का रूप ले लिया। फिर 1962 ई. में फ्रांस के प्रेसिडेन्ट चार्ल्स द गॉल ने अल्जीरिया की स्वतंत्रता को

स्वीकार कर लिया।

- **उत्तर-पूर्वी अफ्रीका में उपनिवेश मुक्ति का मॉडल**- उत्तर-पूर्वी अफ्रीका में उपनिवेश मुक्ति का मॉडल ब्रिटिश उपनिवेश केन्या एवं मिस्र ने तैयार किया। चूंकि इन क्षेत्रों में ब्रिटिश के व्यापक हित निहित थे, इसलिए ब्रिटिश के द्वारा स्वतंत्रता को दबाने का हर संभव प्रयास किया गया।

केन्या-

- केन्या में एक बड़ी भूमि सम्पदा पर ब्रिटिश कुलीनों ने कब्जा कर रखा था। उनके द्वारा बड़े-बडे फार्मलैंड चलाये जा रहे थे और लोगों के श्रम का भरपूर दोहन किया जा रहा था। ये ब्रिटिश, केन्या में स्थायी रूप में निवास करने की योजना बना रहे थे। अतः इन ब्रिटिश कुलीनों के द्वारा स्वतंत्रता के तमाम प्रयासों को विफल किया जा रहा था। अंत में, देशी लोगों ने ब्रिटिश कुलीनों के विरुद्ध माऊ-माऊ आंदोलन संगठित किया। इससे केन्या की स्वतंत्रता के लिए ब्रिटेन के ऊपर अत्यधिक दबाव पड़ने लगा। अंत में, 1960 के दशक के आरम्भ में केन्या को आजादी मिली।

मिस्र-

- मिस्र में ब्रिटिश का मुख्य आकर्षण रहा था स्वेज नहर। स्वेज नहर पर कब्जा बनाए रखने के लिए ब्रिटिश, मिस्र की स्वतंत्रता के लिए तैयार नहीं थे। जबकि 20वीं सदी के आरम्भ से ही मिस्र में आजादी की माँग उठ रही थी। जगलूल पाशा के नेतृत्व में एक राष्ट्रवादी आंदोलन शुरू हो गया। अंत में, ब्रिटेन ने 1922 ई. में मिस्र को नाममात्र की स्वतंत्रता प्रदान की, परन्तु व्यवहार में मिस्र, ब्रिटिश नियंत्रण में ही बना रहा तथा स्वेज नहर के निकट एक ब्रिटिश सेना स्थापित रही, ताकि स्वेज नहर पर ब्रिटिश नियंत्रण बना रहे।
- अंत में, राष्ट्रवादी दबाव को देखते हुए ब्रिटिश सरकार ने 1959 ई. में मिस्र के शासक कर्नल नासिर के साथ समझौता कर अपनी सेना वापस बुला ली, परन्तु फिर भी स्वेज नहर से संबंधित विवाद समाप्त नहीं हुआ और 2 वर्ष के अंदर ही इसने 'स्वेज नहर संकट' का रूप ले लिया।

प्रश्नः- चीन एवं वियतनाम ने उपनिवेश-मुक्ति का पृथक मॉडल ग्रहण किया। स्पष्ट कीजिए।

*(**प्रश्न विश्लेषणः**- यह प्रश्न भी 'Hypothetical' है। Key words हैं- 'चीन' 'वियतनाम', 'एक पृथक मॉडल', स्पष्ट कीजिए'।)*

उत्तरः- द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् उपनिवेश-मुक्ति को बल मिला। इसे 'विउपनिवेशीकरण' का नाम दिया जाता है। स्वतंत्रता के इस आन्दोलन में अधिकांश देशों में नेतृत्व उदारवादी-पूँजीवादी दल के हाथों में रहा था, परन्तु कुछ देशों में नेतृत्व के लिए समाजवादी दल सामने आया तथा इसने वैकल्पिक नेतृत्व देने का प्रयास किया।

ऐसे देशों में चीन एवं वियतनाम प्रमुख थे। परन्तु चूँकि समाजवादी सरकारें पूँजीवादी विश्व व्यवस्था के लिए खतरा उत्पन्न कर सकती थीं, इसलिए चीन एवं वियतनाम का समाजवादी नेतृत्व यूएसए समेत अन्य पूँजीवादी सरकारों को डराने लगा। इसीलिए अटलांटिक चार्टर को ताक पर रखकर संयुक्त राज्य अमेरिका विरोध के लिए सामने आया तथा चीन एवं वियतनाम की स्वतंत्रता का मुद्दा शीतयुद्ध का हिस्सा बन गया।

चीन में समाजवादी दल का नेतृत्व माओ-त्से-तुंग कर रहा था। वह तीन दशकों के एक लम्बे संघर्ष के पश्चात् 1949 में चीनी गणतंत्र स्थापित करने में सफल रहा। दूसरी तरफ वियतनाम में हो-ची-मिन्ह ने 1945 में गणतंत्र स्थापित करने की घोषणा की, परन्तु वियतनाम का मुद्दा तीस वर्षों के गुहयुद्ध का हिस्सा बन गया।

इस प्रकार, चीन एवं वियतनाम ने उपनिवेश मुक्ति का पृथक मॉडल ग्रहण किया तथा इसने विश्व राजनीति को एक नयी दिशा दे दी।

प्रश्नः- किन कारणों से वियतनाम की स्वतंत्रता आगामी 30 वर्षों की अशांति का कारण बनी? स्पष्ट कीजिए।

उत्तरः- वियतनाम की समस्या ने अटलांटिक चार्टर की प्रभावहीनता को स्पष्ट कर दिया। संयुक्त राज्य अमेरिका किसी भी राष्ट्र के आत्मनिर्णय के अधिकार का समर्थक था, बशर्ते नेतृत्व पूँजीवादी दल के हाथ में हो। परंतु चूंकि वियतनाम में स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व हो-ची-मिन्ह के अंतर्गत कम्युनिस्ट पार्टी के हाथ में था, यह बात संयुक्त राज्य अमेरिका को मंजूर नहीं थी। इस प्रकार शीतयुद्ध का एजेंडा अटलांटिक चार्टर पर हावी हो गया और वियतनाम आगामी 30 वर्षों के लिए अशांत हो गया।

संयुक्त राज्य अमेरिका के षड्यंत्र के कारण संयुक्त राष्ट्र संघ ने वियतनाम को दो भागों में; यथा- उत्तरी वियतनाम तथा दक्षिणी वियतनाम में विभाजित कर दिया। उसमें यह आश्वासन दिया गया था कि 1954 के 2 वर्षों के पश्चात् अर्थात् 1956 में वियतनाम में जनमत संग्रह कराया जाएगा और उस आधार पर उसके भविष्य का निर्माण होगा। परंतु जनमत संग्रह को टाल दिया गया। तभी उत्तरी वियतनाम ने दक्षिणी वियतनाम के क्षेत्र में अपने साम्यवादी कार्यकर्त्ताओं को किसानों के वेश में भेजना आरंभ कर दिया। इन्हें 'वियतकोंग' के नाम से जाना गया। वियतकोंग के बदलते हुए प्रभाव से घबराकर संयुक्त राज्य अमेरिका ने वियतनाम में अपनी सेना भेज दी और फिर एक बड़ी उलझन में फंस गया। वस्तुतः ये वियतकोंग गोरिल्ला

पद्धति से संघर्ष कर रहे थे, अत: अमेरिकी सैनिक सफल नहीं हो पाए। अंत में संयुक्त राज्य अमेरिका ने राष्ट्रपति निक्सन के आदेश पर 1973 में अमेरिकी सेना को वापस बुला लिया। फिर 1975 में उत्तरी वियतनाम की साम्यवादी सरकार ने दक्षिण वियतनाम को जीतकर वियतनाम को एकीकृत कर लिया। इस प्रकार जिस वियतनाम को साम्यवाद से बचाने के लिए 58000 अमेरिकी सैनिकों ने अपना बलिदान दिया था, वह साम्यवादी सरकार के नियंत्रण में ही आ गया तथा वियतनाम, अमेरिका के लिए वाटरलू सिद्ध हुआ।

प्रश्न: द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया को प्रेरित करने वाले कारकों को उद्घाटित कीजिए।

उत्तर: एशिया एवं अफ्रीका की उपनिवेश मुक्ति पर द्वितीय विश्व युद्ध का वही प्रभाव रहा, जो नेपोलियन के युद्धों का लैटिन अमेरिका स्थित स्पेन के उपनिवेशों पर रहा था।

वस्तुत: नेपोलियन के युद्धों के पश्चात् राष्ट्रवाद की विचारधारा का जो प्रसार हुआ था, वह यूरोपीय संस्थाओं के माध्यम से लैटिन अमेरिका तक पहुँच गया। उसी प्रकार, द्वितीय विश्वयुद्ध के मध्य अपने पक्ष को मजबूत करने के लिए मित्र राष्ट्रों ने प्रजातांत्रिक विश्व बनाम फासीवाद का जो नारा दिया, उसने पहले एशिया, तत्पश्चात् अफ्रीका की राष्ट्रवादी आकांक्षा को बढ़ा दिया। अत: द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् एशिया में राष्ट्रवादी आंदोलन अधिक उग्र एवं जुझारू हो गया तथा प्रशासन एवं सेना में भी राष्ट्रवाद का तत्व प्रवेश करने लगा। वहीं दूसरी तरफ द्वितीय विश्वयुद्ध ने यूरोप के वर्चस्व का अंत कर दिया। युद्ध के कारण यूरोप की प्रमुख साम्राज्यवादी शक्तियाँ कमजोर हो गईं। इसके अतिरिक्त युद्ध के पश्चात् उनके समक्ष आर्थिक पुनर्निर्माण का प्रश्न भी उपस्थित हुआ। अत: अब उनके लिए उपनिवेशों को बनाए रखना कठिन हो गया। फिर वही समय है जब महाशक्ति के रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत रूस के रूप में दो महाशक्तियों का उद्भव हुआ। इन दोनों का रुख उपनिवेश विरोधी रहा। सोवियत रूस के संदर्भ में तो उपनिवेशवाद-विरोधी दृष्टिकोण साम्यवाद के तर्कशास्त्र में ही निहित था, वहीं संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए उपनिवेश मुक्ति का अर्थ था अपने बाजार का विस्तार क्योंकि विश्व युद्धोत्तर काल में वह विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में उभरा था। उधर अटलांटिक चार्टर एवं उसके सिद्धांतों पर आधारित संयुक्त राष्ट्र संघ का बल भी उपनिवेश मुक्ति पर रहा था। फिर एशिया के संदर्भ में उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया को बल देने में जापानी साम्राज्यवाद की भी भूमिका रही थी क्योंकि उसने द्वितीय विश्वयुद्ध के मध्य पश्चिमी शक्तियों को अपने एशियाई उपनिवेश से खदेड़ दिया था। उसी प्रकार अफ्रीकी उपनिवेश की मुक्ति पर एशियाई घटनाओं का भी प्रभाव पड़ा।

इस तरह हम देखते हैं विउपनिवेशीकरण एक जटिल प्रक्रिया का परिणाम था तथा इसके लिए एक से अधिक कारक उत्तरदायी रहे थे।

प्रश्न: पूर्वी अफ्रीका में उपनिवेश विरोधी संघर्ष को पाश्चात्य शिक्षित अफ्रीकियों के नवसंभ्रांत वर्ग के द्वारा नेतृत्व प्रदान किया गया था। परीक्षण कीजिए। (UPSC- 2016)

उत्तर - विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया तथा नेतृत्व का स्वरूप अलग-अलग रहा। पश्चिमी अफ्रीका में अगर अल्जीरिया और नाइजीरिया को अपवाद में रखा जाता है तो उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया शांतिपूर्ण रही और नेतृत्व मध्यवर्ग के हाथों में रहा।

इन क्षेत्रों में विभिन्न कारकों ने शिक्षित मध्यवर्ग के उद्भव में अपनी भूमिका निभाई थी। प्रथम, इन क्षेत्रों में ईसाई मिशनरियों के द्वारा शिक्षा के विकास के लिए काम किया गया था। उसी प्रकार कुछ अतिथि ब्रिटिश और फ्रांसीसियों के अधीन सरकारी सेवा से जुड़े रहे थे। अत: उनके बीच शिक्षा की बेहतर प्रगति हुई थी। इसके अतिरिक्त कुछ अफ्रीकी ऐसे थे जिन्होंने विदेश जाकर शिक्षा ग्रहण की थी तथा अपने देश लौटकर राजनीतिक रूप में अधिक सक्रिय हो गए थे। साथ ही कुछ अफ्रीकी प्रवासी भी शिक्षित होकर लौटे थे और वे भी राजनीतिक रूप में सक्रिय थे। बताया जाता है कि पश्चिमी अफ्रीका के मध्य वर्ग पर संयुक्त राज्य अमेरिका के अश्वेत आंदोलन का भी प्रभाव था।

इन शिक्षित और मध्यवर्गीय अफ्रीकियों में एक महत्वपूर्ण नेता थे क्वामे नक्रुमाह। उन्होंने गोल्ड कोस्ट में स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व किया था। यह गोल्ड कोस्ट 1958 में घाना के नाम से स्वतंत्र हो गया। माना जाता है कि नक्रुमाह पर भारतीय राष्ट्रवादियों का ही प्रभाव था। एक तरह से यदि देखा जाए तो मध्यवर्गीय आंदोलन पर आधारित स्वतंत्रता का मॉडल घाना ने तैयार किया था तथा इसका प्रभाव अन्य पश्चिम अफ्रीकी देशों पर भी देखा गया। उदाहरण के लिए, सियरा लियोन, मेरीटोनिया आदि।

वस्तुत: शांतिपूर्ण सत्ता हस्तांतरण का एक और कारण था जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता, वह था इन क्षेत्रों में साम्राज्यवादी शक्तियों का कोई बड़ा हित, खतरे में न होना।

इस प्रकार हम पाते हैं कि उत्तरी-पश्चिमी अफ्रीका में स्वतंत्रता की प्रक्रिया शांतिपूर्ण, अपने स्वरूप में संवैधानिक तथा शिक्षित मध्यवर्ग के द्वारा प्रेरित हो रही थी।

■ **क्या उपनिवेश मुक्ति के पश्चात् उपनिवेशवाद समाप्त हो गया?**

- एशियाई -अफ्रीकी क्षेत्रों में उपनिवेश मुक्ति के पश्चात् भी उपनिवेशवाद समाप्त नहीं हुआ, बल्कि उसने केवल अपना रूप परिवर्तित किया अर्थात् शोषण का तरीका बदल गया। इसलिए इसे 'नव-उपनिवेशवाद' का नाम दिया जाता है।

■ **नव-उपनिवेशवाद से क्या तात्पर्य है?**

- जहाँ पहले देश पर प्रत्यक्ष नियंत्रण स्थापित किया जाता था, अब उसकी जगह अप्रत्यक्ष नियंत्रण बना कर रखा जाता है तथा उस क्षेत्र से विभिन्न रूपों में आर्थिक लाभ प्राप्त किया जाता है। इसे नव-उपनिवेशवाद का नाम दिया गया है। नव-उपनिवेशवाद की अभिव्यक्ति निम्नलिखित रूपों में होती है-

1. **आर्थिक क्षेत्र**-
   i. पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का संचालन करने वाली अंतर्राष्ट्रीय एजेन्सियों; यथा- आई.एम.एफ, विश्व बैंक एवं वर्तमान में विश्व व्यापार संगठन (WTO) के माध्यम से तृतीय विश्व की अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण बनाए रखना।
   ii. पश्चिम की बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के द्वारा तृतीय विश्व की अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण बनाए रखने का प्रयास करना।
   iii. अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण सम्मेलन में तृतीय विश्व के देशों पर अन्याय पूर्ण ढंग से पड़ने वाले दबाव भी नव-उपनिवेशवाद का ही एक रूप हैं।
2. **सामाजिक क्षेत्र**-
   i. गैर-यूरोपीय लोगों के प्रति नस्लीय भेदभाव की नीति अपनाना तथा उन्हें ओरिएन्टल कहकर संबोधित करना।
3. **सांस्कृतिक क्षेत्र**-
   i. पश्चिमी चिन्तक विश्व को केन्द्रीय एवं परिधीय क्षेत्र (Central and peripheral region) में बाँटकर देखते हैं। पश्चिम को वे केंद्रीय क्षेत्र मानते हैं तथा यह सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं कि जितने भी उत्तम विचार हैं, वे केन्द्रीय क्षेत्र में विकसित होते हैं तथा वहाँ से परिधीय क्षेत्र में उनका प्रसार होता है।
   ii. पश्चिमी देशों के विद्वानों एवं विशेषज्ञों के द्वारा तृतीय विश्व के सामाजिक विज्ञानों के विश्लेषण को अपने ढंग से तोड़ा और मरोड़ा जाता है। कुल मिलाकर यह 'मिशेल फूको' के 'नॉलेज पावर' की अवधारणा को सिद्ध करता प्रतीत होता है।

प्रश्नः- द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् विउपनिवेशीकरण को बल मिला, परंतु उपनिवेशवाद समाप्त नहीं हुआ, उसने केवल रूप परिवर्तित किया। परीक्षण कीजिए।

(प्रश्न विश्लेषणः- इस प्रश्न की प्रकृति 'Hypothetical' है। इसमें Keywords - 'उपनिवेश-मुक्ति' तथा 'उपनिवेशवाद का रूप परिवर्तन' हैं। अतः उत्तर के दो भाग होंगे।)

उत्तर- द्वितीय विश्य युद्ध के परिणामों में एक महत्वपूर्ण परिणाम है उपनिवेश-मुक्ति की प्रक्रिया को प्रोत्साहन। द्वितीय विश्व युद्ध ने ब्रिटिश, फ्रेंच एवं डच साम्राज्य पर विध्वंशात्मक प्रभाव पैदा किया क्योंकि एक तरफ इसने उपनिवेशों में राष्ट्रवादी चेतना को बढ़ावा दिया, वहीं दूसरी तरफ इसने साम्राज्यवादी शक्तियों को कमजोर कर दिया। इसके परिणामस्वरूप सर्वप्रथम एशिया तथा फिर अफ्रीकी महाद्वीप में उपनिवेश मुक्ति को बल मिला तथा आगामी चार दशकों में उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया लगभग पूरी हो गई।

परन्तु, सूक्ष्म परीक्षण करने पर यह ज्ञात होता है कि उपनिवेशवाद समाप्त नहीं हुआ, अपितु उसने महज अपना रूप परिवर्तित कर लिया तथा नव-स्वतंत्र एशियाई- अफ्रीकी देशों पर अप्रत्यक्ष नियंत्रण बनाए रखने का प्रयास किया। निम्नलिखित कारक अप्रत्यक्ष नियंत्रण के अवयव बने-

- डॉलर कूटनीति तथा बहुराष्ट्रीय कंपनियों के माध्यम से संबंधित देशों की अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण बनाए रखना।
- आई.एम.एफ., विश्व बैंक तथा विश्व व्यापार संगठन के माध्यम से इन देशों की अर्थव्यवस्था को बलपूर्वक खोलना।
- पर्यावरण एवं सुरक्षा तथा आतंकवाद के विरूद्ध संघर्ष के नाम पर तृतीय विश्व के देशों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप।
- इन देशों को सांस्कृतिक रूप से पिछड़ा घोषित कर इन पर पश्चिमी मानदण्डों को थोपने का प्रयास।

उपनिवेशवाद के इस परिवर्तित रूप को नव-उपनिवेशवाद का नाम दिया जाता है।

अभ्यास प्रश्न-

1. *'एशियाई-अफ्रीकी उपनिवेशों को मुक्ति मिली, विउपनिवेशीकरण की प्रक्रिया लगभग पूरी हुई, फिर भी उपनिवेशवाद ने अतीत बनने से इनकार कर दिया है।' इस कथन का परीक्षण कीजिए।*
2. *उपनिवेशवाद किसी देश अथवा समुदाय के संसाधानों का ही दोहन नहीं करता, बल्कि उसकी सोच एवं चरित्र को भी बदलने का प्रयास करता है तथा उस समुदाय के लोगों में हीन भावना उत्पन्न करने का भी प्रयास करता है। टिप्पणी कीजिए।*

शीतयुद्ध के मध्य दोनों गुटों के बीच टकराहट के कारण उत्पन्न कुछ प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संकट

■ **कोरियाई संकट (1950-53ई.)**

• **कारण-**

1. दो विश्वयुद्धों के बाद, कोरियाई प्रायद्वीप को 38वीं समानांतर रेखा के आधार पर दो भागों में विभाजित कर दिया गया।
2. जून, 1950 में उत्तर कोरिया ने चीनी सहायता एवं रूस निर्मित टैंकों की बदौलत दक्षिण कोरिया पर आक्रमण कर उसके अधिकांश भागों पर कब्जा कर लिया।
3. उत्तर कोरिया की आक्रामकता पर अंकुश लगाने के लिये अमेरिका के नेतृत्व में पूँजीवादी शक्तियों ने अमेरिकी जनरल मैक ऑर्थर के अधीन एक संयुक्त सैन्य कमान का गठन किया। इसका उद्देश्य उत्तर कोरिया के नियंत्रण से दक्षिण कोरिया को मुक्त कराना था।
4. दक्षिण कोरिया को मुक्त कराने के बाद मैक ऑर्थर के अधीन सेना उत्तर कोरिया के अंदर चीन की सीमा तक पहुँच गई। अत: चीन ने इस कदम का विरोध किया और उत्तर कोरिया की सहायता के लिए पहुँच गया।

• **प्रभाव:-** कोरिया संकट के समय चीन के आक्रामक रुख को देखते हुए संयुक्त राज्य अमेरिका ने तृतीय विश्व में अपनी शक्ति का विस्तार करना चाहा। इस प्रकार शीतयुद्ध का वैश्वीकरण हो गया।

■ **स्वेज नहर संकट (1956ई.)**

• **कारण:**

1. ब्रिटेन के नेतृत्व में पश्चिमी देशों ने मिस्र की विदेश नीति को अपने अनुसार चलाने का प्रयास किया। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु पश्चिमी शक्तियों ने मिस्र को नील नदी पर आसवान बाँध के निर्माण के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की पेशकश की।
2. परंतु मिस्र के राष्ट्रपति नासिर ने स्वतंत्र विदेश नीति का अनुपालन किया और 'साम्यवादी चीन' को मान्यता प्रदान की। इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप ब्रिटेन ने घोषित वित्तीय सहायता को रोक दिया।
3. मिस्र के शासक नासिर ने स्वेज नहर के पट्टे को समाप्त कर इसका राष्ट्रीयकरण कर दिया।
4. इसके प्रतिशोध में ब्रिटेन, फ्राँस और इजराइल ने मिस्र पर आक्रमण कर दिया।

• **प्रभाव**- स्वेज नहर संकट के पश्चात् पश्चिम एशिया की राजनीति में ब्रिटेन का वर्चस्व समाप्त हो गया तथा उसकी जगह संयुक्त राज्य अमेरिका के द्वारा भरने का प्रयास किया गया। इस काल में पश्चिम एशिया और अरब क्षेत्र में सोवियत रूस के द्वारा भी अपने प्रभाव क्षेत्र के विस्तार का प्रयास किया गया।

प्रश्न : 1956 में स्वेज संकट को पैदा करने वाली घटनाएँ क्या थीं? उसने एक विश्व शक्ति के रूप में ब्रिटेन की आत्मछवि पर किस प्रकार अंतिम प्रहार किया? (UPSC-2014)

उत्तर: स्वेज नहर संकट शीतयुद्ध का अपरिहार्य परिणाम था तथा इसने विश्व राजनीति के समीकरण को बदल दिया। शीतयुद्ध के मध्य समाजवादी देशों की ओर मिस्र के झुकाव ने ब्रिटेन तथा यूएसए को चिंतित कर दिया था। अत: मिस्र को पश्चिमी गुट की ओर आकर्षित करने के लिए ब्रिटेन और अमेरिका ने आसवान बाँध के निर्माण के लिए मिस्र को आर्थिक सहायता देने का वादा किया, किंतु आगे मिस्र की गतिविधियों से असंतुष्ट होने के कारण इस सहायता को रोक लिया गया। बदले में, अतिरिक्त संसाधन जुटाने के लिये कर्नल

नासिर ने स्वेज नहर का राष्ट्रीयकरण कर दिया। फलतः ब्रिटेन ने फ्रांस तथा इजराइल के साथ मिलकर मिस्र पर आक्रमण कर दिया। इसे स्वेज नहर संकट के नाम से जाना गया।

इस घटना से ब्रिटेन की शक्ति और प्रतिष्ठा को धक्का लगा। वैसे तो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ही आर्थिक और राजनीतिक शक्ति के रूप में ब्रिटेन का कद छोटा होने लगा था क्योंकि उसने भारत समेत एशिया के कई महत्वपूर्ण उपनिवेशों को खो दिया था, किंतु अब स्वेज नहर संकट ने पश्चिम एशिया से भी उसके प्रस्थान को अवश्यम्भावी बना दिया। पश्चिम एशिया में ब्रिटिश के प्रस्थान से जो एक राजनीतिक शून्य की स्थिति उत्पन्न हो गई थी, उसे संयुक्त राज्य अमेरिका ने भर दिया। इस रूप में हम इस घटना को ब्रिटेन की आत्मछवि पर अंतिम प्रहार मान सकते हैं।

■ वियतनाम समस्या (1954-75ई.)

- **कारण-**

1. वर्ष 1945 के बाद जब जापान वियतनाम से पीछे हट गया, तब एक कम्युनिस्ट नेता हो-ची-मिन्ह ने उत्तरी वियतनाम में एक गणतंत्र की स्थापना की, वहीं फ्रांस ने दक्षिणी क्षेत्र पर कब्जा कर लिया। यह मुद्दा शीत युद्ध का हिस्सा बन गया।
2. अंत में, 1954 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा वियतनाम के प्रश्न को सुलझाने का प्रयत्न किया गया और उसका विभाजन उत्तरी वियतनाम तथा दक्षिणी वियतनाम में किया गया। वस्तुतः 1956 में वियतनाम में जनमत संग्रह के माध्यम से इसके भविष्य का निर्णय होना था।
3. लेकिन, अमेरिकी दबाव के कारण जनमत संग्रह को स्थगित कर दिया गया और उत्तरी वियतनाम में साम्यवादी सरकार को दबाने के लिए अमेरिका ने अपनी सेना भेज दी।

- **प्रभाव-**

1. वियतनाम, अमेरिका के लिये 'वाटरलू' का मैदान साबित हुआ क्योंकि 58000 अमेरिकी सैनिकों की जान गँवाने के बाद भी वह उत्तरी वियतनाम और दक्षिणी वियतनाम के एकीकरण को रोक नहीं सका।
2. वियतनाम समस्या ने साम्यवाद के लोकप्रिय एशियाई संस्करण को विश्व के सामने प्रस्तुत किया, जो यूरोपीय दृष्टिकोण से पूर्णतः भिन्न था।

■ क्यूबा मिसाइल संकट (1963ई.)

- **कारण-**

1. क्यूबा में एक गुरिल्ला नेता, फिडेल कास्त्रो सत्ता में आया। फिर उसने क्यूबा की आर्थिक तथा राजनीतिक निर्भरता संयुक्त राज्य अमेरिका पर कम करने के लिए रेडिकल कार्यक्रम प्रस्तुत किया।
2. जब संयुक्त राज्य अमेरिका ने कास्त्रो को सत्ता से बेदखल करने का प्रयास किया, तो उसने सोवियत रूस के साथ राजनयिक संबंध स्थापित कर लिये। सोवियत रूस ने कास्त्रो को सहयोग प्रदान करते हुए क्यूबा में मध्यम दूरी की मिसाइलें तैनात कीं।
3. संयुक्त राज्य अमेरिका ने सोवियत रूस के इस कदम के विरुद्ध तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की और सोवियत रूस पर क्यूबा से मिसाइलों को हटा लेने का दबाव डाला। उधर सोवियत रूस ने परमाणु हथियारों से भरे कुछ युद्धपोत भी क्यूबा के लिये रवाना कर दिये। अतः तब संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत रूस के बीच सीधी टकराहट की स्थिति उत्पन्न हो गई।

- **प्रभाव-**

1. परमाणु युद्ध की संभावना ने दोनों गुटों के बीच तनाव शैथिल्य को प्रोत्साहन दिया और फिर 1963 में सोवियत रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच हॉटलाइन एग्रीमेंट हुआ।

2. सोवियत रूस कहीं न कहीं परमाणु क्षमता में संयुक्त राज्य अमेरिका से पीछे था। अतः उसने फिर प्रयास कर समानता का स्तर हासिल किया।
3. इसने नाटो की नीति के बारे में अमेरिका एवं फ्रांस के बीच मतभेदों को जन्म दिया।

गुटनिरपेक्ष आंदोलन

- गुटनिरपेक्षता से तात्पर्य पृथकता अथवा तटस्थता नहीं है, बल्कि इससे तात्पर्य है कि दोनों महाशक्तियों से संबंध रखते हुए भी महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय मसलों पर स्वतंत्र रूप में निर्णय लेना।
- **गुटनिरपेक्षता की नीति को प्रेरित करने वाले कारकः**

1. इसे नव-साम्राज्यवाद से बचने के एक महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में देखा जा रहा था। नेहरू जैसे नेता भारत, चीन एवं अन्य शक्तियों के परस्पर संबंधों के आधार पर एशिया का पुनरुत्थान देख रहे थे।
2. नव स्वतंत्र देशों के समक्ष प्राथमिकता आर्थिक विकास की थी, किंतु किसी सैनिक गुट का सदस्य बनने का अर्थ था कि अपने इस दुर्लभ संसाधन को सैनिक तैयारी पर खर्च कर देना।
3. भारत एवं कुछ अन्य देशों का मानना था कि अगर विदेश नीति स्वतंत्र नहीं हो, तो स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं रह जाता।
4. भारत एवं मिस्र जैसे कुछ देशों का यह मानना था कि गुटनिरपेक्षता की नीति उनकी संस्कृति में ही निहित है।

- **गुटनिरपेक्ष संगठन**- आरंभ में गुटनिरपेक्षता भारत के प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू की नीति थी, परंतु आगे चलकर इसमें कुछ और भी नेता शामिल हो गए। वे नेतागण थे- युगोस्लाविया के शासक मार्शल टीटो तथा मिस्र के प्रधान कर्नल नासिर। सर्वप्रथम 1955 में इंडोनेशिया की राजधानी बांडुंग में एक सम्मेलन हुआ। इसमें 29 एशियाई-अफ्रीकी देशों ने हिस्सा लिया और एक तरह से देखा जाए, तो इसी सम्मेलन में गुटनिरपेक्ष आंदोलन की नीति निर्मित हुई। फिर भी, औपचारिक रूप में गुटनिरपेक्ष आंदोलन की शुरुआत 1961 में बेलग्रेड सम्मेलन में हुई। इसमें 25 देशों ने हिस्सा लिया था।
- **योगदानः**

1. इसने आरंभ से ही उपनिवेश मुक्ति, दक्षिण अफ्रीकी सरकार की रंगभेद नीति का विरोध, परमाणु परीक्षण को रोकना आदि अपना लक्ष्य निर्धारित किया था।
2. इसने तृतीय विश्व के देशों को संगठित कर अंतर्राष्ट्रीय संगठनों में मिल-जुल कर मतदान किया। इतना तक कि पश्चिमी देशों के द्वारा भी इसे गंभीरता से लिया गया।
3. संयुक्त राष्ट्र संघ में G-77 जैसे संगठन का निर्माण कर इसने अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक संबंधों के प्रजातांत्रीकरण की माँग को उठाया।

- **सीमाएँः**

1. आंदोलन के आरम्भ के कुछ समय पश्चात् यह अपने मूल मार्ग से विचलित हो गया और राजनीतिक मुद्दों की ओर मुड़ गया।
2. इसके अधिकांश सदस्य देश संयुक्त राज्य अमेरिका अथवा सोवियत रूस की ओर झुके रहे। इस पर श्रीलंका के राष्ट्रपति जयवर्द्धने ने व्यंग करते हुए कहा कि अब सही अर्थों में दो ही गुटनिरपेक्ष राष्ट्र बच गए हैं- प्रथम, संयुक्त राज्य अमेरिका और दूसरा, सोवियत रूस।
3. तृतीय विश्व के देशों के बीच भी परस्पर युद्ध और टकराहट चलती रही। इस कारण यह संगठन प्रभावी नहीं रहा। उदाहरण के लिए, 1962 में भारत-चीन युद्ध ने इसे गहरा धक्का पहुँचाया। फिर 1965 तथा 1971 में भारत-पाक युद्ध हुआ और पाकिस्तान का विभाजन हो गया। 1970 के दशक में चीन ने वियतनाम पर हमला कर दिया। 1980 तथा 1988 के 8 वर्षों तक ईरान-इराक युद्ध चलता रहा। दूसरी तरफ, अफ्रीकी राष्ट्रों में जनजातीय संघर्ष और सीमा विवाद चलते रहे। इस कारण गुटनिरपेक्ष आंदोलन की नीतियाँ एवं कार्यक्रम दुष्प्रभावित हुए।
4. फिर इसके सदस्य देशों की स्थिति में भी अंतर आने लगा, यथा- इसका एक संस्थापक देश युगोस्लाविया का विघटन हो गया। दूसरा संस्थापक देश मिस्र, अमेरिका के निकट चला गया। साइप्रस और माल्टा जैसे राष्ट्र यूरोपीय संघ के सदस्य बन गए तथा गुटनिरपेक्ष समूह से अपना नाता तोड़ लिया। भारत भी अपने अन्य सामरिक सहयोगियों की ओर देख रहा है और गुटनिरपेक्ष आंदोलन को गंभीरता से नहीं ले रहा है। अभी हाल में वेनेजुएला के सम्मेलन में भारतीय प्रधानमंत्री का जाना चर्चा का विषय है।

- **क्या गुटनिरपेक्ष आंदोलन प्रासंगिक रह गया है?**-यह आज भी प्रासांगिक हो सकता है, परंतु इसके कार्यक्रम और संरचना में परिवर्तन लाने की जरूरत है। इसकी प्रासंगिकता के निम्नलिखित कारण हैं-

1. संयुक्त राष्ट्र संघ के बाद यह विश्व का अकेला सबसे बड़ा संगठन है। सबसे बढ़कर इस पर पश्चिमी देशों का दबदबा नहीं है।
2. विश्व व्यापार संगठन तथा अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण सम्मेलन के द्वारा प्रेरित पश्चिमी साम्राज्यवाद का सामना करने के लिए यह बेहतर सामूहिक मंच हो सकता है।
3. आतंकवाद का वैश्विक विस्तार देखते हुए इसका सामूहिक रूप से सामना किए जाने की जरूरत है।

संयुक्त राष्ट्र संघ

■ **संयुक्त राष्ट्र संघ के गठन की पृष्ठभूमि-**

- संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना का मूल अगस्त, 1941 के अटलांटिक चार्टर में देखा जा सकता है।
- 25 अप्रैल, 1945 को सेन फ्रांसिस्को सम्मेलन में 61 देशों ने संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर पर हस्ताक्षर किये।

■ **संयुक्त राष्ट्र संघ के अंग-**

- संयुक्त राष्ट्र संघ के मुख्य 6 अंग इस प्रकार हैं-
  1. महासभा
  2. सुरक्षा परिषद्
  3. आर्थिक एवं सामाजिक परिषद्
  4. न्यास परिषद्
  5. अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय
  6. सचिवालय

■ **राष्ट्र संघ और संयुक्त राष्ट्र संघ की संरचना में अंतर-**

- राष्ट्र संघ की विफलता के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO) का गठन किया गया था। अत: यूएनओ में पहले की गलतियों को सुधारने का प्रयास किया गया।

1. राष्ट्र संघ की तुलना में संयुक्त राष्ट्र संघ अधिक प्रतिनिधियों वाला संगठन है।
2. राष्ट्र संघ की विफलता का मुख्य कारण असेंबली और काउन्सिल को एक समान अधिकार दिया जाना माना जाता है।
3. प्रमुख देशों को राष्ट्र संघ में कोई विशेष शक्ति प्राप्त नहीं थी। किसी प्रेरक शक्ति के अभाव में प्रमुख वैश्विक शक्तियों ने विश्व में शांति व्यवस्था बनाए रखने में अधिक दिलचस्पी नहीं दिखाई।
4. राष्ट्र संघ के पास आक्रामक देशों के विरुद्ध सैन्य कार्रवाई करने का अधिकार नहीं था, लेकिन संयुक्त राष्ट्र संघ में इस तरह का प्रावधान किया गया है।

■ **संयुक्त राष्ट्र संघ की उपलब्धियाँ-**

- **राजनीतिक उपलब्धियाँ-** संयुक्त राष्ट्र संघ ने विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक मतभेदों को हल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।
- **आर्थिक उपलब्धियाँ-** यह दुनिया के आर्थिक परिदृश्य को बेहतर बनाने के लिये अपनी विशेष एजेंसियों; जैसे- अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन आदि के माध्यम से नवीन अनुसंधानों को प्रोत्साहित करता है।
- **सामाजिक उपलब्धियाँ-** इसने स्वास्थ्य के क्षेत्र में बड़ी सफलता हासिल की है। उदाहरण के लिए, इसने चेचक तथा पोलियो जैसी बीमारी को समाप्त करने में सफलता पायी है। आज भी संयुक्त राष्ट्र संघ के अंतर्गत 'विश्व स्वास्थ्य संगठन' विभिन्न टीकाकरण कार्यक्रमों का संचालन कर रहा है एवं एड्स जैसी बीमारी की रोकथाम के लिए प्रयासरत है।
- **सांस्कृतिक उपलब्धियाँ-** यूनेस्को के माध्यम से प्राचीन विश्व की विस्मृत संस्कृतियों को संरक्षित करने में संयुक्त राष्ट्र संघ का प्रयास सराहनीय है।

■ **संयुक्त राष्ट्र संघ की सीमाएँ**

1. राजनीतिक मोर्चे पर यूएनओ को सीमित सफलता ही मिली है। इसके महत्वपूर्ण कारण हैं- कुछ सदस्य देशों के पास वीटो शक्ति का होना। इस कारण से लगभग संपूर्ण शीतयुद्ध के काल में यह संस्था लकवाग्रस्त बनी रही।
2. संयुक्त राष्ट्र संघ के पास अपने स्वयं के वित्तीय स्रोत न होने के कारण इसे अधिकांश समय वित्तीय चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।
3. संयुक्त राष्ट्र संघ सैन्य सहयोग के लिए सदस्य राष्ट्रों पर निर्भर है।
4. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना 1945 ई. में की गई थी। तब से लेकर आज तक इसकी संरचना लगभग अपरिवर्तित है। ऐसे में यूएनओ में बदलते वैश्विक राजनीतिक परिदृश्य के मुताबिक बदलाव किये जाने की आवश्यकता है।

■■■